B.A. History Hon's Part - II

Paper: III, Unit: III, Date: 5.8.2020 Lecture No.: 5

Lession: विजयनगर साम्राज्य की उपलब्धियाँ

विजयनगर साम्राज्य के निम्नलिखित उपलब्धियाँ थीं जिसके कारण इसका उत्थान हुआ।

'केन्द्रीय शासन': धर्म सापेक्ष शासन विजयनगर का शासन धर्म सापेक्ष था। यह शासन मुसलमानों के विरुद्ध हिन्दु संस्कृति तथा धर्म की रक्षा हेतु बना था। धर्म सापेक्ष होने पर भी विदेशियों पर अत्याचार नहीं किया जाता था।

सैनिक तानाशाही का शासन विजयनगर का शासन सैनिक शासन था। केन्द्रीय शासन का प्रधान राजा होता था जिसके अधिकार अनियंत्रित तथा असीमित थे। यद्यपि मंत्रीपरिषद राजा को सलाह देती थी, फिर भी राजा स्वयं सेनापति एवं न्यायाधीश होता था।

मंत्रीपरिषद राजा को शासन कार्य में परामर्श देने के लिए एक मंत्रिपरिषद होती थी। यद्यपि एक मंत्रीपरिषद होती है कि विजयनगर जैसे बड़े राज्य के लिए इनकी संख्या आठ या उससे अधिक होती होगी। राजा उनकी नियुक्ति करता था। मंत्री ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य जाति के हुआ करते थे।

दरबार की शोभा विजयनगर के शासक मुसलमान शासकों की भाँति दरबारों की शोभा पर विशेष ध्यान देते थे। इस पर बहुत धन का व्यय होता था। विभिन्न प्रकार के उत्सव भी दरबार में होते थे।

कार्यविधि शासन के समस्त कार्य दरबार में होते थे। सम्राट की आज्ञा सावधानीपूर्वक लिखी जाती थी। सम्राट अगर किसी कार्य पर उदारता दिखाता था तो उसे शोक की लगी मुहर दे देता था जिससे सम्राट की कृपा प्रदर्शित होती थी।

सैनिक संगठन विजयनगर साम्राज्य का युद्धकालों के लिए संघर्ष सदैव जारी रहा। सामंतीय आधार पर सेना का संगठन किया गया। सभी सेनाओं के तीन अंग होते थे। हाथी घोड़े तथा पैदल। युद्ध के समय राज्य की सेनाएँ एकत्रित की जाती थीं और एक साथ शत्रु से युद्ध करती थी।

कर नीति राज्य की आय का प्रधान साधन भूमि कर था। भू-राजस्व से संबंध रखनेवाला एक अलग विभाग था। कर-निर्धारण हेतु भूमि को चार वर्गों में विभक्त किया गया था- सिंचित भूमि, सूखा भूमि, उद्यान तथा वन। हिन्दुयुग में साधारणतः उपज का छठा भाग राज्य कर के रूप में वसूल किया जाता था किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि विजयनगर के राजा 1/6 से कुछ अधिक कर वसूल करते थे क्योंकि उन्हें बहमनी सुल्तानों की निरंतर शत्रुता से राज्य की रक्षा के लिए एक विशाल सेना रखनी पड़ती थी। भूमिकर के अतिरिक्त सरकार चारागाह कर, विवाह कर, चुंगी-शुल्क तथा दुकानों एवं दस्तकारों की वस्तुओं पर भी कर लगाती थी। कर नकद तथा जिन्स दोनों रूपों में वसूल किया जाता था।

प्रान्तीय शासन: विजयनगर साम्राज्य कई प्रान्तों में विभक्त था। लेखकों के मतानुसार डोमिंगोस पेइज के कथन पर आधारित है साम्राज्य में 200 प्रांत थे। इस भूल का कारण सम्भवतः यह है कि पेइज ने कर संग्रहों और प्रांतीय सूबेदारों को एक ही समझा था। प्रत्येक प्रांत एक सूबेदार की अधीनता में होता था जिसे

नायक कहते थे और जो राज-परिवार का सदस्य अथवा प्रभावशाली सामंत रहता था। प्रान्त की सैनिक, असैनिक तथा न्याय संबंधी शक्ति सूबेदार के ही हाथों में होती थी किन्तु उसे अपने प्रान्तों की आय-व्यय का लेखा केन्द्रीय सरकार के सम्मुख प्रस्तुत करना पड़ता था। आवश्यकता पड़ने पर उसे सैनिक सहायता भी भेजनी पड़ती थी, यद्यपि राजा शक्तिशाली होता था तथा सूबेदारों पर नियंत्रण रखता था, फिर भी अपने क्षेत्राधिकारियों में विस्तृत शक्तियों का उपयोग करते थे।

स्थानीय शासन : राज्य के विभिन्न प्रांत कई 'नाडु' में विभक्त थे। प्रत्येक 'नाडु' नगरों तथा ग्रामों में विभक्त रहता था। ग्राम का सम्बन्ध पंचायतों द्वारा होता था जिसे गाँव-सभा कहते थे। यह सभा गाँव के लेखक, तौला, चौकीदार, बेगार का चौधरी तथा अनेक वंशानुगत पदाधिकारियों की सहायता से गाँव का प्रबन्ध किया करती थी। इन पदाधिकारियों को जागीरें अथवा कृषि की उपज के एक भाग के रूप में वेतन मिलता था। केन्द्रीय सरकार महानायकाचार्य नामक एक पदाधिकारी द्वारा गाँव से सम्बन्ध कायम रखती थी। इस पदाधिकारी को गाँव के प्रबंध का निरीक्षण करने का अधिकार था।

विजयनगर शासन व्यवस्था के दोष: यद्यपि विजयनगर की सम्पूर्ण शासन व्यवस्था विस्तृत रूप से सुसंगठित तथा न्यायपूर्ण थी, किन्तु उसमें कुछ दोष भी थे जो निम्न प्रकार हैं!-

∴ प्रान्तीय सूबेदारों के हाथों में असीमित शक्ति थी और अन्त में यही उनके छिन्न-भिन्न होने के कारण सिद्ध हुआ।

∴ सैनिक संगठन इतना सुयोग्य नहीं था जितना कि होना चाहिए था और फलस्वरूप उस स्थिति में बारबार विजयनगर को निरंतर बहमनी सुल्तानों के विरुद्ध युद्ध करना पड़ता था।

∴ राजाओं ने यह भूल की कि व्यापारिक लाभ के उद्देश्य से पुर्तगालियों को राज्य के पश्चिम तट पर बस जाने दिया।

∴ उन्होंने लोगों की व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का दमन करने का प्रयत्न नहीं किया।

∴ सब सुविधाओं के होते हुए भी राजाओं ने व्यापारिक नीति विकसित करने का प्रयत्न नहीं किया। इन्हीं खामियों के कारण विजयनगर साम्राज्य का पतन हो गया।

□ डॉ० शंकर जय किशन चौधरी
अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग
डी० बी० कॉलेज, जयनगर

B. A. History Hon's, Part – I

Paper: I, Unit: III, Date: 5.08.2020 Lecture No: 6

Lession: सातवाहन काल की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक दशा

सातवाहन सभ्यता एवं संस्कृति की जानकारी हमें मुख्यतः अभिलेखों से होती है। उसके अलावा साहित्य, स्मारकों एवं सिक्कों से भी हमें मदद मिलती है। हमें उस समय की सभ्यता एवं संस्कृति का सुस्पष्ट चित्र प्राप्त हो जाता है।

राजनैतिक दशा: सम्राट का पद परम्परागत होता था, किन्तु सम्राट निरंकुश नहीं था। उसकी सत्ता पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए पौर सभायें होती थी। जनपद के लिए राज्यपाल होते थे। इसके अतिरिक्त साम्राज्य में अनेक गणराज्य, निकाय, ग्राम तथा श्रेणी होते थे जिनके पृथक-पृथक अधिकारी होते थे तथा ये सब अपनी आन्तरिक समस्याओं का समाधान करने में स्वतंत्र होते थे।

सेना चार भागों में विभाजित थी तथा उनका संगठन अच्छा था। शहरों को बड़ी दीवारों, परकोटों तथा दरवाजों द्वारा सुरक्षित रखा जाता था।

सामाजिक दशा: जाति प्रथा तथा जाति शुद्धता प्रचलित थी, जो हमें गौतमीपुत्र सातकर्णी के अभिलेखों से पता चलता है। हिन्दु समाज व्यवसाय के आधार पर चार वर्गों में विभाजित था। उच्च श्रेणी में महाभोज और महा-सेनापति आते थे, मध्य श्रेणी में अमात्य, महामात्र और भण्डागारिक आते थे तथा निम्न श्रेणी में लेखक, वैद्य, हालकीय (किसान), स्वर्णकार, गाधिक, वर्धकी (बढ़ई), मालाकार, लोहवाणिज (लुहार) तथा दासक (मछुआ) आते थे।

संयुक्त परिवार प्रथा थी। कुटुम्ब के मुखिया का अपना महत्व होता था और उसे गृहपति या कुटुम्बिन कहा जाता था। सातवाहनों के समाज में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रीति का प्रचलन दृष्टिगोचर होता है। माता के नाम पर सम्राट अपना नाम घोषित करते थे।

धार्मिक दशा: इस युग में ब्राह्मण धर्म बहुत फला-फूला। यज्ञों की बाहुल्यता हुई। वैष्णव और शैव धर्मों का उदय हुआ। धार्मिक उदारता थी। बौद्ध एवं जैन भिक्षुओं को अनेक गुफायें दान दी गयीं। ये भिक्षु जनता को सदाचार की शिक्षा देते थे। लोगों को धार्मिक स्वतंत्रता थी। इस समय की मुख्य विशेषता यह थी कि अलग-अलग प्रकार के धर्म अंगीकार करने के बाद भी लोगों को अपनी जाति से वंचित नहीं होना पड़ता था। एक उपासितु नामक व्यक्ति ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था परन्तु फिर भी वह ब्राह्मण ही कहलाता था।

साहित्य एवं कला: इस काल में साहित्य एवं कला को भी प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। प्राकृत भाषा को बढ़ावा दिया गया। गाथा सप्तशती, बृहत्कथा इस युग की रचनायें हैं। 'कातंत्र' भी इसी समय की कृति मानी गई है। इसके अतिरिक्त वैद्यक दर्शन तथा ज्योतिष पर भी साहित्य लिखा गया। इस काल की बौद्ध कलाकृतियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। कई लयन तथा चैत्यगृहों का निर्माण इस समय हुआ। लयन में एक विशाल कमरा बना होता था तथा उसके चारों ओर छोटे-छोटे कमरे होते थे जिनमें एक-एक पत्थर की बेंच भिक्षुओं के शयन के लिए बनी होती थी। चैत्यगृह के महाद्वार छत तथा खिड़कियाँ बनी होती थी। प्रत्येक चैत्य में एक आंगन

और उसके चारों ओर संकीर्ण बरामदे होते थे तथा एक छोटा स्तूप भी होता था। भरहुत, सांची, अमरावती और नागार्जुनीकोण्ड में इस काल की कला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत हैं। मामलों में सातवाहनों का शासन प्रबंध मौर्यों के शासन प्रबन्ध से मिलता-जुलता था। सातवाहन काल में कुछ बातें जिनका विवरण सम्राट अशोक के अभिलेखों से हमें मिलता है। हम इस प्रकार पाते हैं कि सातवाहन प्रशासन मौर्य एवं गुप्त प्रशासकों तथा उत्तर एवं दक्षिण के बीच एक महत्वपूर्ण श्रृंखला है। सातवाहन राजाओं के युग में कला, संस्कृति, व्यापार इत्यादि की आशातीत प्रगति हुई।

आर्थिक जीवन: लोगों की मुख्य जीविका तो अब भी खेती ही थी परन्तु आन्ध्रों के लम्बे और सुव्यवस्थित शासनकाल में उद्योग और व्यापार की बड़ी उन्नति हुई। बहुत से व्यवसायवालों ने अपनी-अपनी सामूहिक संस्थाएँ या श्रेणियाँ बना ली थी जैसे धान्यिक (अनाज के व्यवसायी) कुम्हार, कौलिक निकाय अथवा कोलिक (बुनकर) तिलपिषक (तेली), कासाकार, वंशकार (बाँस का काम करनेवाला) गौल्मिक (इत्र बनानेवाले) आदि। देश के विभिन्न प्रदेशों और नगरों को मिलानेवाली सड़क और मार्ग बने हुए थे, जिनसे होकर व्यापार के रास्ते चलते थे और वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था। दक्षिण भारत में पैठन नगर, नासिक, जुन्नार, करहाटक (करहाड) आदि नगर प्रसिद्ध व्यापार के केन्द्र थे। पश्चिम के देशों से व्यापार भी होता था। पश्चिमी तट के प्रसिद्ध बन्दरगाह भड़ौच, सोपारा, कल्याण आदि थे। व्यापार क्रय-विक्रय और विनिमय के लिए कई प्रकार के सिक्कों का प्रचलन था। सबसे बड़ा सिक्का सुवर्ण था जो चाँदी के पैंतीस कार्षापण के बराबर होता था। इसके नीचे चाँदी के कुषाण नाम का सिक्का था।

इस युग में वैदेशिक व्यापार की भी विशेष उन्नति हुई। मौर्य-वंश के अन्तिम समय में भारत के उत्तर-पश्चिम में यवन राजाओं के साम्राज्य स्थापित हो गये थे। उन राज्यों के द्वारा पश्चिमी संसार से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध और भी सुदृढ़ हो गया। भारतीय पश्चिमी सागर तट के व्यापारियों ने अरब देशों से मिस्र तक के देशों से व्यापार करना आरम्भ कर दिया था। यही नहीं रोम के साथ भी भारत का व्यापार-सम्बन्ध इस युग में स्थापित था, क्योंकि इसी के फलस्वरूप हमें हजारा, रावलपिंडी, कन्नौज, मिर्जापुर, चुनार, इलाहाबाद आदि के समीपवर्ती स्थानों में हुई खुदाई में रोमन सिक्के उपलब्ध होते रहे हैं। यहाँ से हाथी-दाँत के सुन्दर एवं आकर्षक सामान, मोती, कालीमिर्च, लौंग, मसाले, सुगन्धियाँ, औषधियाँ, रेशमी कपड़े तथा बारीक सुप्रसिद्ध मलमल काफी मात्रा में रोम भेजे जाते थे। मिस्र और रोम के अलावा बर्मा, सुमात्रा, जावा, चम्पा, चीन आदि देशों के साथ भी भारत का विदेशी व्यापार सुदृढ़ था।

डॉ० शंकर जय किशन चौधरी
अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग
डी० बी० कॉलेज, जयनगर